ॐ

परमात्मने नमः

मोक्षमार्गप्रकाशक प्रवचन

(भाग–१)

(आचार्यकल्प पण्डित टोडरमल द्वारा रचित
श्री मोक्षमार्गप्रकाशक ग्रन्थ पर अध्यात्मयुगसृष्टा पूज्य गुरुदेवश्री
कानजीस्वामी के उपलब्ध प्रवचन)

गुरुवार, दि. १२–८–१९५४,
प्रथम अधिकार, प्रवचन नं. १

मोक्षमार्ग प्रकाशक शास्त्र का १४वाँ पृष्ठ है। देखिये, अधिकार क्या चल रहा है? कि प्रश्नकार का प्रश्न है कि साधारण प्राणी अपने ज्ञान के क्षयोपमश के कारण, कोई शास्त्र का अन्यथा अर्थ भासित हो और शास्त्र में गूँथे, तो उसकी तो परंपरा चले तो उसमें क्या समझना? ऐसा प्रश्न उठा उसका यह उत्तर चलता है। शास्त्रज्ञान की न्यूनता के कारण, कोई अर्थ अन्यथा भासित होकर उसको गूँथे तो उसकी परंपरा चले उसका क्या समझना? ऐसा प्रश्नकार ने प्रश्न किया है। तब कहा कि, भाई! ऐसा नहीं बन सकता। जैनशासन में यथार्थ श्रद्धा, ज्ञान को धारण करनेवाले परंपरा से चले आ रहे हैं, इसलिये उसकी सत्य परंपरा टूटी नहीं है। हाँ, इतनी बात अवश्य है कि कोई ऐसे मिथ्यादृष्टि जीव ने सत्य तत्त्व का अन्यथा निरूपण किया हो और गूँथा हो तो दूसरा पुरुष ऐसा निकले कि उसकी परंपरा चलने न दे।

'पुनः इतना विशेष जानना कि जिसे अन्यथा जानने से जीव का अहित हो...' जिसे अन्यथा जानने से जीव का अहित हो 'ऐसे देव–गुरु–धर्मादिक उनकी एवं जीवादिक तत्त्वों का श्रद्धानी तो अन्यथा जाने ही नहीं...' सच्चा जैनी यथार्थ श्रद्धावान हो उसे अंतर अभिप्राय में ऐसा है कि वीतराग ही सम्यग्दर्शन–ज्ञान–चारित्र है, वीतरागी भाव

ही मोक्ष का मार्ग है--इसलिये उसे सच्चे देव-गुरु-धर्म में फेरफार नहीं होता और जीवादि तत्त्व जीव, अजीव आदि, मोक्षादि तत्त्व हैं। मोक्ष तो पूर्ण सर्वज्ञ की दशा है। जीव सदा त्रिकाल ज्ञानमय है। संवर, निर्जरा सो धर्म है। संवर, निर्जरा को धारण करनेवाले सच्चे गुरु हैं और देव एवं सद्गुरु, धर्म--अहिंसा है, ऐसे देव-गुरु-धर्म को और नव तत्त्वों को तो सच्चा श्रद्धावान जैनी अन्यथा जाने ही नहीं। 'उसका तो जैन आगम में प्रसिद्ध कथन है...' यहाँ यह बात सिद्ध करी है। उसका तो जैन आगम में प्रसिद्ध कथन है कि सर्वज्ञ देव कैसे होते हैं? निर्ग्रंथ संत भावलिंग सहित उनका द्रव्यलिंग कैसा होता है? राग रहित अहिंसा स्वभाव धर्म कैसा होता है? और नव तत्त्व की प्रसिद्धि कैसी होती है? जीव, अजीव, पुण्य-पाप, आस्रव, संवर, निर्जरा, बंध, मोक्ष- उसका तो जैन आगम, परंपरा सत् शास्त्र वीतराग द्वारा कहे गये हैं, उसमें तो प्रसिद्ध कथन यथार्थ है। समझ में आया? यह जैन आगम की परिभाषा रखी है। वीतराग के श्रीमुख से प्रवाहित, गणधर द्वारा उस अनुसार गूँथे गये और उस अनुसार परंपरा आचार्य आदि द्वारा रचित, उस जैन आगम में देव कैसे, गुरु कैसे, धर्म कैसा, जीव कैसा, संवर कैसा, निर्जरा कैसी--उसका तो प्रसिद्ध कथन है, प्रगट कथन है। उसमें कहीं ... कथन नहीं है। वह तो प्रगट व्यक्त निर्मल कथन चला आ रहा है। इसलिये उसमें तो जैन को सच्ची श्रद्धा समझने में कोई भी भ्रमणा होने का कारण नहीं रहता। शेठी!

देखिये! सच्चे देव सर्वज्ञदेव कैसे होते हैं, सच्चे गुरु मुनि अभ्यंतर और बाह्य कैसे होते हैं, सच्चा धर्म कैसा होता है, यह सब तो शास्त्र में प्रसिद्ध और प्रगट एवं स्पष्ट कथन है। अनेक आगमों में उसकी साक्षी मिलती है। अनेक आगम--जैनागम वीतराग के उसमें उसकी साक्षी मिलती है। उसमें कोई विरोध और भ्रम का कारण नहीं रहता है। समझ में आया? यह जैनागम अर्थात् सनातन शास्त्र वीतराग के चले आ रहे हैं उसको जैनागम कहते हैं। उसमें देव-गुरु-शास्त्र का यथार्थ स्वरूप चला आ रहा है। बीच में दूसरे कल्पित (शास्त्र) भगवान के नाम पर किये, उसमें तो देव-गुरु-धर्म की भ्रांति उठायी है और उसमें नवों तत्त्व की भ्रांति उत्पन्न हुई है। उसको जैनागम नहीं कहते हैं।

षट्खण्डागम, धवल, जयधवल, महाधवल, समयसार, प्रवचनसार, नियमसार आदि में तो देव-गुरु-धर्म और नव तत्त्वों का प्रसिद्ध अनेक आगमों में पूर्वापर विरोध रहित प्रसिद्ध और व्यक्त, प्रगट कथन है। उसमें तो जैन के सच्चे श्रद्धालु को कहीं भ्रमणा होने का कारण नहीं रहता। सच्चे श्रद्धालु को।

'**और जिनको भ्रम से अन्यथा जानने पर भी...**' इतनी बात। कोई ऐसा

वचन हो कि सच्चे नव तत्त्व, छः द्रव्य और पंचास्तिकाय एवं देव-गुरु-धर्म में मुख्य प्रयोजन में तो कहीं प्रसिद्ध कथन शास्त्र में है--इसलिये भूल होने की संभावना नहीं है। '**जिनको भ्रम से अन्यथा जानने पर भी जिन-आज्ञा मानने से जीव का बुरा न हो, ऐसे कोई सूक्ष्म अर्थ...**' पाठ है। जीव का बुरा न हो, ऐसे कोई सूक्ष्म अर्थ। उसमें तो बुरा हो ऐसा आया था, भाई! जिसे अन्यथा जानने से जीव का बुरा हो, खराब हो, अहित हो। ऐसे देव-गुरु-धर्म और नव तत्त्वों का तो सच्चे आगम समयसार आदि में स्पष्ट कथन है। अरे..! रत्नकरण्ड श्रावकाचार लो, इष्टोपदशे आदि शास्त्र लो, कोई भी शास्त्र दिगंबर सनातन जैनदर्शन का लो, उसमें सब स्पष्ट कथन है।

अब, ऐसे कोई सूक्ष्म बोल में भूल हो जाये, अन्यथा जानने पर भी उसे जिन की आज्ञा मानने से वीतराग ऐसा कहते होंगे, ऐसा जानने में आ गया, साधारण धारणा के बोल में और जीव का बुरु न हो, उसमें कहीं जीव का बुरा नहीं होता। कोई धारणा के बोल में फेरफार हो गया। ऐसे कोई सूक्ष्म अर्थ में किसी को, किसी को, वह किसी को ऐसा कहते हैं। '**उनमें से किसी को कोई अन्यथा प्रमाणता में लाये तो भी उसका विशेष दोष नहीं है।**' मूल तत्त्व में फेर पड़े, ऐसा हो तो उसे आत्मा का अहित हो। मूल तत्त्व देव-गुरु-शास्त्र की बातें तो अनेक शास्त्रों में एक धारा से पूर्वापर विरोध रहित बात चली आ रही है। कोई भी शास्त्र लो, सनातन जैनागम वीतराग के, समझ में आया? निर्ग्रंथ मार्ग का कहा हुआ सनातन दिगंबर मार्ग, उसका कोई भी ग्रंथ और शास्त्र लो तो उसमें देव-गुरु-धर्म और नव तत्त्व का प्रसिद्ध प्रगट कथन पूर्वापर विरोध रहित है। पूर्वापर विरोध कहीं है ऐसा नहीं बनता। उसमें तो कहीं पूर्वापर विरोध है ही नहीं। कहीं कोई अल्प फेर (हो कि) कहीं ऐसा लिखा हो कि ऐकेन्द्रिय को सास्वादन समकित हो। कोई ग्रंथ कहे कि ऐकेन्द्रिय को सास्वादन नहीं होता। ऐसा कुछ अन्यथा जानने से उसमें आत्मा का अहित नहीं होता। ऐसे कथन शास्त्र में आये। इसके कारण उसमें कहीं मूल विशेष दोष नहीं है। समझ में आया? साधारण कोई ऐसा बोल हो, परन्तु मूल देव-गुरु-धर्म और नव तत्त्व में फेर पड़े तो आत्मा का अहित हो।

मोक्ष का मार्ग सम्यग्दर्शन-ज्ञान-चारित्र है, और संसार का मार्ग मिथ्यादर्शन-मिथ्याज्ञान-मिथ्याचारित्र है। उसमें कहीं कोई अल्प भी फ़र्क़ पड़े तो उसका अहित हो। लेकिन उस बात की तो प्रसिद्धता है। कोई शास्त्र में उस बात में गुप्तता नहीं है। वह तो प्रसिद्ध प्रगट बात है। कोई ऐसा गूढ़ अर्थ आदि हो धारणा के विषय में, तो उसमें कोई विशेष दोष नहीं है।

'**वही गोम्मटसार में कहा है :--**'

सम्माइट्ठी जीवो उवइट्ठं पवयणं तु सद्दहदि।

सद्दहदि असब्भावं अजाणमणो गुरुणियोगा।। (गाथा-२७ जीवकाण्ड)

अर्थ :-- '**सम्यग्दृष्टि जीव...**' जिसे सच्चा आत्मभान हुआ है, उसे '**उपदेशित सत्य वचन का श्रद्धान करता है...**' अन्य गुरु द्वारा उपदेशित सच्चे अर्थ का समकिती श्रद्धान करता है। '**और अजानमान गुरु के नियोग से...**' गुरु के क्षयोपशम में कोई फेर हो, और उस क्षयोपशम में कोई अन्यथा साधारण देव-गुरु-धर्म, नव तत्त्व और मोक्षमार्ग से अतिरिक्त कोई बात में धारणा में गुरु का कोई फ़र्क़ है तो '**असत्य का भी श्रद्धान करता है...**' कोई धारणा के बोल में। समझे? धारणा, धारणा यानी यथार्थ मुख्य प्रयोजन में नहीं। मुख्य प्रयोजन में हो तो मिथ्यादृष्टि बन जाता है। देव-गुरु-धर्म, नव तत्त्व, मोक्षमार्ग, निमित्त-नैमित्तिक संबंध की श्रद्धा में तो उसकी श्रद्धा में अल्प भी फ़र्क़ नहीं हो सकता। समझ में आया? आगे है, २२१-२२२ पृष्ठ पर। कहो, समझ में आया?

इसलिये कहते हैं कि अजानमान गुरु के योग से, कोई असत्य साधारण धारणा में आ जाये तो उसमें कोई विशेष दोष नहीं है। परन्तु देव-गुरु-धर्म, समकितदर्शन-ज्ञान-चारित्र में यदि कहीं विपरीत श्रद्धा हो तो उसका अहित हो। उस श्रद्धा के कथन में परंपरा के सत्य आगम में कहीं विरोध है उसकी जाँच करे तो उसका एक ही न्याय सर्वत्र निकलता है।

'**पुनश्च, हमें भी विशेष ज्ञान नहीं है...**' अब, स्वयं कहते हैं (कि) मुझे भी कोई विशेष ज्ञान नहीं है, मैं क्षयोपशम ज्ञानवाला हूँ। '**और जिन आज्ञा भंग करने का बहुत भय है,...**' जिन आज्ञा कैसे भंग न हो, ऐसा मुझे बहुत भय है। '**परन्तु इसी विचार के बल से ग्रंथ करने का साहस करते हैं।**' इस विचार के बल से नाम वास्तविक प्रयोजनभूत तत्त्व का तो मुझे श्रद्धा और भान है। अन्यथा कोई बात धारणा के बोल में रह जाये तो उसमें कोई विशेष दोष नहीं है। इस साहस से, '**इसी विचार के बल से ग्रंथ करने का साहस करते हैं।**' समझ में आया?

'**इसलिये इस ग्रंथ में जैसा ग्रंथों में वर्णन है...**' महा संतों ने पूर्व में जो पूर्वापर कथन जो अनादि से चला आ रहा है, भगवान की वाणी के साथ मेलयुक्त है, '**वैसा ही वर्णन करेंगे।**' वैसा ही इसमें वर्णन करुँगा। '**अथवा कहीं पूर्व ग्रंथों में सामान्य गूढ़ वर्णन था,...**' इतनी बात है। '**कहीं पूर्व ग्रंथों में सामान्य गूढ़ वर्णन था, उसका विशेष प्रगट करके...**' कि इसमें यह करना चाहते हैं। ऐसा विशेष भाव प्रगट करके '**वर्णन यहाँ करेंगे।**' वह मेरे घर का नहीं करुँगा। पूर्व ग्रंथों

में गूढ हो, उस गूढ़ता को खोलकर और उसमें क्या अभिप्राय कहना चाहते हैं, उसको मैं इस ग्रंथ में विशेष प्रगट करुँगा। '**सो इसप्रकार वर्णन करने में मैं तो बहुत सावधानी रखूँगा।**' देखा? जिन आज्ञा भंग करने का भय है और इसप्रकार वर्णन करने में मैं बहुत सावधानी रखूँगा। '**सावधानी करने पर भी कहीं सूक्ष्म अर्थ का...**' सूक्ष्म अर्थ हाँ! परमार्थ तत्त्व में कोई फ़र्क़ नहीं। देव-गुरु-धर्म में कोई फ़र्क़ नहीं। समझ में आया? आगे आता है न भाई दूसरा? इसमें बहुत आते हैं। २६४ या उसमें कहीं आता है न? कि, यह तो इसकी मूल वस्तु होनी चाहिये। देखिये, २५९ पृष्ठ पर है। '**हेयोपादेय तत्त्वों की परीक्षा करना योग्य है।**' देखिये, २५९ पृष्ठ। है? नीचे से छठवी पंक्ति। छठवी पंक्ति का अंतिम भाग। '**इसलिये...**' छठवी का अंतिम भाग। '**हेयोपादेय तत्त्वों की परीक्षा करना योग्य है।**' छोड़ने योग्य कौन है? आदरणीय कौन है? उसकी परीक्षा तो धर्मी जीवों को अवश्य करनी चाहिये। है? देखिये, २५९ पृष्ठ। हेय--मिथ्यादर्शन, मिथ्याज्ञान, मिथ्याचारित्र की बराबर परीक्षा करनी। उपादेय--सम्यग्दर्शन, ज्ञान, चारित्र की बराबर परीक्षा करनी।

'**वहाँ जीवादिक द्रव्यों...**' की तो बराबर परीक्षा करनी। शास्त्र में प्रसिद्ध कथन है। '**तत्त्वों को...**' पहिचानना। देखा? जीवादि छः द्रव्य, जीवादि नव तत्त्वों को बराबर पहिचानना। '**तथा त्यागने योग्य मिथ्यात्व-रागादिक और ग्रहण करने योग्य सम्यग्दर्शनादिक का स्वरूप पहिचानना।**' त्यागने योग्य मिथ्यादर्शन किसे कहना? राग विकार किसे कहना? व्यवहार किसे कहना? वह छोड़ने योग्य है। उसको तो बराबर पहिचानना। '**और ग्रहण करने योग्य सम्यग्दर्शनादिक का स्वरूप पहिचानना। तथा निमित्त-नैमित्तिकादिक जैसे हैं, वैसे पहिचानना।**' लो। निमित्त किसे कहना? नैमित्तिक स्वतंत्र किसप्रकार है? उसको तो बराबर उपादान-निमित्त, निमित्त-नैमित्तिक उसकी तो बराबर परीक्षा करनी। शास्त्र में उसके कथन तो प्रसिद्ध प्रगट हैं, उसमें कोई फेरफार है नहीं। कोई भी शास्त्र वीतराग दिगंबर सनातन सत्य जैनदर्शन के ले लो, उसमें कोई भी ग्रंथ में यह बात तो प्रसिद्ध और प्रगट है। उसमें कहीं कोई गूढ़ता नहीं है। समझ में आया? अन्य बहुत जगह है, परन्तु इसमें इस एक मुद्दे में बात आ गयी। कहो, समझ में आया? उसकी तो बराबर परीक्षा करनी। उसमें यदि गड़गड़ गोटाला है तो मिथ्यादर्शन रहता है। समझ में आया?

उस बात में कहीं फेरफार है नहीं, ऐसा कहा। वह तो कोई भी शास्त्र अभी देखो, एक समयसार लो, एक साधारण षट्द्रव्यसंग्रह लो, परमात्मप्रकाश लो, इष्टोपदेश लो, कोई भी छोटा-बड़ा ग्रंथ लो, छह ढाला लो,... समझ में आता है? उसमें तो देव-गुरु-धर्म, नव तत्त्व, सम्यग्दर्शन, ज्ञान, चारित्र, छोड़नेयोग्य मिथ्यादर्शन, मिथ्याज्ञान,

मिथ्याचारित्र का स्पष्ट प्रसिद्ध कथन है। उसमें कहीं गड़बड़ नहीं है। उसमें कुछ गूढ़ भी नहीं है। गड़बड़ तो नहीं है, परन्तु गूढ भी नहीं है। वह तो स्पष्ट परीक्षा करना चाहे तो हो सकती है।

मुमुक्षु :-- क्षयोपशम न हो तो क्या करे?

उत्तर :-- क्षयोपशम न हो तो संसार का क्षयोपशम नहीं है? यथार्थ रुचि हो तो उस प्रकार का ख्याल आये बिना रहे ही नहीं। क्षयोपशम कम-बेसी का सवाल नहीं है, उसकी रुचि यथार्थ होनी चाहिये। यथार्थ रुचि हो तो सत् की खोज में सत्य में असत्य पाखंड रहे नहीं। प्रभु के पास पाखंड टिके नहीं। इसप्रकार प्रभुत्व तत्त्व क्या है, सम्यक् का, ज्ञान-दर्शन का, चारित्र का सामर्थ्य, देव-गुरु-धर्म का, प्रभुता का सामर्थ्य क्या है ऐसी जिसे सत्य की रुचिपूर्वक खोज हो तो उसके अन्दर पाखंड एवं अज्ञान टिक नहीं सकता। उसे कोई भ्रमित कर जाय ऐसा बनता नहीं। कहो, समझ में आया? शेठी! क्षयोपशम थोड़ा हो तो उसमें पाखंड नहीं टिकता। बुद्धि थोड़ी हो बालक को, लेकिन उसको कोई आकर कहे कि तेरे पिता को मैंने पूर्व भव में पच्चीस हजार दिये थे, तो लड़का क्या कहेगा? अरे..! पूर्व भव की बात क्या? मेरी बुद्धि थोड़ी है, मैं क्या करुँ ऐसा कहे? मेरी थोड़ी है इसलिये हाँ भर देनी? चल, चल। पूर्व भव में पच्चीस हजार दिये थे, ऐसी बात तू करता है, तू जूठा है। आठ साल का बालक भी ना कह दे। उसमें कोई विशेष बुद्धि की आवश्यकता नहीं है।

इसप्रकार सच्चे देव-गुरु और धर्म, सच्चे नव तत्त्व उसमें मोक्षतत्त्व केवलज्ञानयुक्त तत्त्व कैसा होता है? संवर, निर्जरा का कैसा स्वभाव है? आस्रव, बंध कैसे होते हैं? उसके कारण संवर, निर्जरा नहीं होते ऐसी व्याख्या तो स्पष्ट है। उसमें कोई गड़बड़ करवाने जाये तो चलता नहीं। क्योंकि शास्त्र में उसके कथन तो प्रसिद्ध और प्रगट है। कोई साधारण धारणा की बात में फ़र्क़ पड़े, तो कहते हैं कि, उसमें भी मैं सावधानी रखूँगा। '**सावधानी करने पर भी कहीं सूक्ष्म अर्थ का अन्यथा वर्णन हो जाये तो विशेष बुद्धिमान हों, वे उसे सँवार कर शुद्ध करें--ऐसी मेरी प्रार्थना है।**' लो, यह विनय वर्णित करते हैं। साधारण बोल में कोई फ़र्क़ पड़े, तत्त्वों में तो कोई फ़र्क़ है ही नहीं, क्योंकि ग्रंथ में तो वह बात स्पष्ट है। इसप्रकार यह ग्रंथ रचने का निश्चय किया। '**इसप्रकार शास्त्र रचने का निश्चय किया है।**' कितनी संधियुक्त बातें की है!

'**अब यहाँ, कैसे शास्त्र वाँचने-सुनने योग्य हैं...**' कैसे शास्त्र वाँचने-सुनने योग्य हैं? कैसे शास्त्र जोड़ना, सीखना, सीखाना, विचारने, लिखवाने, धर्मकथा करनी वह शास्त्र कैसे होने चाहिये उसकी व्याख्या करते हैं। समझ में आया? भगवानजीभाई को

यह थोड़ा अधिक चाहिये था इसलिये (लिया)। इस रेकोर्डर में। कहो, समझ में आया? कैसे शास्त्र वाँचना, सुनना, सुनाना, जोड़ना, गूँथना, रचना, सीखना, सीखाना, विचारना, लिखना और लिखवाना? ऐसे शास्त्र पढ़ना, यह जो बोल कहने में आते हैं, उस बात की व्याख्या इसमें करते हैं। देखो! यह समझने जैसी मुद्दे की रकम की बात है। कहो, समझ में आया? दूसरे शब्द नीचे हैं। उपर बोल चलते हैं, फिर नीचे दूसरे शब्द है। वाँचना, इसप्रकार सुनना, जोड़ना, सीखना, सीखाना, विचारना, लिखना, लिखवाना, ऐसे सत्य शास्त्र। ये तो अभी मेल नहीं रहा है। देखो! पण्डितों को कहे कि, ऐसे तत्त्व लिखना। तो कहेंगे, नहीं, हमें जहाँ पगार मिले वहाँ चाहे जैसा लिखना और चाहे जैसा... कहो, यह बात।

यहाँ परिषद रखी थी। उसमें एक प्रस्ताव रखने का था कि सत्य शास्त्र हो उसे लिखना और प्रसिद्ध करना, अन्य का लिखना नहीं। तो कहने लगे, नहीं, हमें चलता नहीं। प्रस्ताव निकल गया। काल देखो न! यहाँ कहते हैं कि धर्म अर्थीओं को, विद्वान हो कि समकिती हो कि ज्ञानी हो कि गृहस्थ हो कि मुनि हो, कैसे शास्त्र उसे पढ़ना, सुनना, सुनाना, सुनाना...? ए... वाड़ीभाई! कैसे शास्त्र सुनना, पढ़ना, जोड़वा, सीखना, सीखाना? विचारना, लिखना और लिखवाना। चलिये, लिखवाना कहते हैं न भाई! स्वयं लिखे या लिखवाये, लेकिन कैसे होने चाहिये? हैं? बराबर यथार्थरूप हो वह, ऐसे शास्त्र एक पंक्ति में रख दे।

"**जो शास्त्र मोक्षमार्ग का प्रकाश करें...**' ओहोहो..! एक टूकड़ा रख दिया। '**जो शास्त्र मोक्षमार्ग का प्रकाश करें...**' अर्थात् सम्यग्दर्शन-सम्यक्ज्ञान-सम्यक्चारित्र वीतरागी परिणाम का प्रकाश करे। समझ में आता है? क्योंकि जगत को हित तो करना है और अहित का नाश करना है। तो जो शास्त्र--आगम मोक्षमार्ग (अर्थात्) आत्मा की मुक्ति हो, बंधन से छूटे, जिस भाव से बंधन हो उस भाव से छूटने का दर्शाये और जिस भाव से अबंध परिणाम हो ऐसा मोक्ष का मार्ग कहे, प्रकाश करे '**वही शास्त्र वाँचने-सुनने योग्य हैं;...**' इसमें तो बहुत आया।

मुमुक्षु :-- ...

उत्तर :-- यह क्या आया?

जो शास्त्र, आत्मा पूर्णानंद (कैसा है, यह दर्शाये)। क्यों? कि जो मोक्ष प्राप्त करना चाहता है, वह मोक्ष कहीं बाहर से आये ऐसी चीज नहीं है। मोक्ष अन्दर की शक्तिरूप से आत्मा मोक्ष है और प्रगटरूप से आत्मा उस शक्ति का अवलंबन करे, श्रद्धा-ज्ञान एवं रमणता वीतरागी पर्याय द्वारा करके, उसे पूर्ण मोक्ष हो, ऐसा जिस शास्त्र में कथन हो... सुमेरुमलजी! इसमें तो बहुत आ गया, देखो!

आगम की कसौटी। सुवर्ण की कसौटी करते हैं कि नहीं? (ऐसे) आगम की कसौटी। जो आगम मोक्षमार्ग (दर्शाता हो, वह आगम है)। इसमें तो यह भी आया कि आत्मा है, उसे अनादि से अहितपने की मान्यता है, उसे हितपने की मान्यता, हितपने का ज्ञान और हितपने की रमणता बताये, अहितरूप विकार का नाश करने का बताये, हितपने के मार्ग की उत्पत्ति बताये, उसका नाम आगम कहने में आता है, बाकी आगम नहीं कहलाते। हें!

मुमुक्षु :-- नव तत्त्व आ गये।

उत्तर :-- नव तत्त्व आ गये। अहित का नाश बताये...

मुमुक्षु :-- ...

उत्तर :-- यह आगम है ऐसा पहले निर्णय तो कर। तुझे हित करना है कि नहीं? तो हित शांति से हो कि अशांति से हो? तो जो कोई अशांति, पुण्य-पाप, आस्रव एवं बंध से हित बताये वह आगम नहीं। जो कोई अराग परिणामी श्रद्धा, ज्ञान एवं रमणता से मुक्ति का कारण बताये, और मुक्ति बताये वही मोक्षमार्ग है, वही आगम है। आगम का प्रथम सीधा संक्षिप्त अर्थ (यह है)।

हित करना है कि नहीं? हाँ। तो हित कैसे हो? अनादि काल से अहित चला आ रहा है। अनादि काल से पुण्य-पाप, आस्रव, बंध की दशा चली आ रही है। जीव तो है। पुण्य-पाप, आस्रव और बंध चले आ रहे हैं। नहीं क्या है? संवर, निर्जरा और मोक्ष। नहीं क्या है? मोक्ष का मार्ग। क्या कहा? अनादि से जीव है, जड़ है और उसमें पुण्य-पाप, आस्रव और बंध यह छः तत्त्व तो अनादि से चले आ रहे हैं। भाई! कहो, बराबर है यह? सुमेरुमलजी! क्योंकि अकेला जीव हो तो किस पर लक्ष्य करे? यानी अजीव भी है, जीव भी है। और उस जीव को वर्तमान शांति हो तो उसमें अस्रव, पुण्य-पाप अनादि से चले रहे हैं ऐसा हो नहीं सकता। तो अनादि से पुण्य और पाप, दया और दान, भक्ति, व्रत, काम, क्रोध ऐसा विकार और बंधभाव और वह पुण्य-पाप आस्रव में समा जाते हैं।

अजीव, पुण्य-पाप, आस्रव, बंध और जीव--यह छः चले आ रहे हैं। जिस जीव को शास्त्रश्रवण करना है, सुनना है, वाँचना है किस हेतु से? हित के लिये। जो कर रहा है उसमें कुछ परिवर्तन करने के लिये। जीव है वह अनादि से पुण्य-पाप, आस्रव, बंध की दशा कर रहा है, उसमें से परिवर्तन करने के लिये। जो शास्त्र उस जीव को हमेशा बताये, उस जीव को जीव के आश्रय से पुण्य-पाप, आस्रव, बंध का व्यय नाम नाश बताये, और स्वभाव के आश्रय से मोक्ष का मार्ग सम्यग्दर्शन, ज्ञान, चारित्र बताये और उसका फल पूर्ण मोक्ष बताये उसे आगम कहने में आता

है। मगनभाई! बराबर है यह आगम की व्याख्या? किसे कहना आगम? भगवानजीभाई! बात तो बहुत अच्छी आयी। वे कहते थे, मुझे वहाँ सुनने में ऐसा सादा हो तो ठीक पड़े। है तो बहुत अच्छा और सादा। ठीक है। भाई! यहाँ तो सादी से सादी ऐसी मीठी बात आती है। थोड़ा उसके वीर्य में, ज्ञान में थोड़ा माहात्म्य करके रखे और जमाये, जमाये तो उसे ऐसा लगे कि आ..हा..हा..! यह तो कोई मार्ग है!! लेकिन विचार तो उसे करना चाहिये न? मोहनभाई! यहीं झटककर चला जाये तो हो गया खत्म।

जो आगम... ओहो..हो..! '**जो शास्त्र...**' उसके कथन '**मोक्षमार्ग का प्रकाश करे...**' यहाँ से बात शुरू की है। तब बंधमार्ग का, मोक्षमार्ग के प्रकाश के ज्ञान के साथ बंधमार्ग के अभाव का ज्ञान भी आ जाता है। लेकिन अभाव का, मोक्षमार्ग के भाव का। जो शास्त्र, चाहे जिस प्रकार... चारों अनुयोग हों, कथानुयोग हो, चरणानुयोग हो, द्रव्यानुयोग हो या करणानुयोग हो, मोक्षमार्ग (दर्शाता हो)। अहो.. आत्मा! तुझे श्रद्धा-ज्ञान और चारित्र प्राप्त करना हो तो यह वर्तमान दशा चली आ रही है उसकी रुचि छोड़। वह रुचि छोड़, ऐसी नास्ति से बात तो करे न। लेकिन तुझे यदि हित करना है, शांति चाहिये, आनंद चाहिये यानी कि मुक्ति की राह--पंथ चाहिये, तो मुक्तस्वरूप वस्तु तू है उसके अवलंबन से, उस मुक्तस्वरूप की मोक्ष के कारण की दशा प्रगट होगी। कहो, समझ में आया?

ऐसा जो आगम बताये, '**मोक्षमार्ग का प्रकाश करे वही शास्त्र वाँचने-सुनने योग्य हैं;...**' क्या कहते हैं? कोई भी आगम बात करे, करणानुयोग की करे, प्रकृति की करे, कोई आस्रव, बंध की व्याख्या करे लेकिन उसका प्रयोजन क्या? कि यह स्वभाववान वस्तु है उसको पलट दे। अनादि से पुण्य-पाप विकार की पर्यायरूप, अवस्थारूप रुक गया है, अब स्वभाव का आश्रय करके श्रद्धा, ज्ञान और रमणता प्रगट कर। अन्य आस्रव, बंध से श्रद्धा, ज्ञान, चारित्र नहीं होंगे और श्रद्धा, ज्ञान, चारित्र कोई अजीव के निमित्त से अथवा गुरु मिले इसलिये उनके लक्ष्य से होंगे नहीं। वाड़ीभाई! लो, इसमें तो निमित्त भी उड़ गया और व्यवहार भी उड़ गया। जो आगम व्यवहार और निमित्त से मोक्षमार्ग का प्रकाश न करे तो अवलंबन स्वभाव के अवलंबन से ही प्रगट होता है। ऐसी जो बात करे वही आगम (है)। शेठी! ... शेठी तो बहुत खानदान है तो उसे बड़ी अच्छी लगती है। न्याय आये तब तो उसे अन्दर ऐसा होता है कि ओहो..! मार्ग तो यह है। क्यों शेठी! मार्ग तो ऐसा है, भैया!

वस्तु... तुझे नक्की करना पड़ेगा न प्रभु! तू है कि नहीं? तू है कि नहीं? है तो तेरी हयाती में कुछ वर्तमान में विरुद्ध है कि नहीं? यदि वर्तमान में विरुद्ध न

हो तो तेरी शांति प्रगट होनी चाहिये। सुमेरुमलजी! शरीर में रोग आते हैं, प्रतिकूलता आती है, वह तो जड़ की दशा है। तेरा लक्ष्य पर ऊपर जाता है, वे नहीं करवाते। लक्ष्य तेरा पर के ऊपर जाता है तो तेरी दशा में बंधभाव है कि नहीं? बंधभाव है, उसका नाश करने की अपूर्व दृष्टि बतावे कि बंध का अवलंबन नहीं, शरीर का अवलंबन नहीं और बंधन से छूटने का (उपाय) बताये, तो बंधन से छूटने को (तो) शुद्ध चैतन्य ज्ञानानंद है। क्योंकि प्राप्त की प्राप्ति होती है। तो आत्मा में जो सम्यग्दर्शन, ज्ञान, चारित्र की निर्मल पर्याय का पिण्ड न हो तो कहाँ-से आयेगी? भगवान, आगम जीवतत्त्व की ऐसी परिभाषा करे कि तेरे तत्त्व में प्रभुत्व पूर्ण पड़ा है। तेरी वर्तमान दशा में अप्रभुता नाम पामरता हो गयी है। उस पामरता को, प्रभुता का अवलंबन से पर्याय में प्रभुता प्रगट की जा सकती है। समझ में आया? सुनाई देता है न थोड़ा-थोड़ा? समझ में आता है? हें! यह मुद्दे की बात है, मुद्दे की रकम है।

'**जो शास्त्र मोक्षमार्ग का प्रकाश करे...**' बंधन से छूटने की रीति बताये। बंधन से छूटने की रीति बताये अर्थात् पूर्ण मुक्त होनी की राह बताये, पूर्ण मुक्त होने का पंथ बताये। पूर्ण मुक्त में जैसे कोई भी अवलंबन नहीं है, ऐसे उसके मार्ग में भी पर का कोई अवलंबन नहीं है। '**जो शास्त्र मोक्षमार्ग का प्रकाश करे...**' कहो, समझ में आता है? वह शास्त्र, वही आगम वाँचना। अन्य आगम पढ़ना नहीं। अस्ति में आ गया कि नहीं? अन्य आगम नहीं पढ़ना। जिसमें राग को धर्म बताया हो, पर हो तो मुझे लाभ हो ऐसा बताया हो, समझ में आया? और राग करते-करते कभी संसार का नाश होगा ऐसा बताया हो, ऐसे शास्त्र पढ़ने, सुनने योग्य नहीं है। पढ़ने में, यही आगम पढ़ने और सुनने योग्य है। वाड़ीभाई! ऐसा सुनने योग्य है।

मुमुक्षु :-- ...

उत्तर :-- क्या? लेकिन सच्चा शास्त्र पढ़ा ही कहाँ है? सच्चा शास्त्र पढ़ा ही नहीं है। सच्चे शास्त्र में यह है, यह पढ़ा तो उसका नाम सच्चा शास्त्र पढ़ा कहने में आता है। नहीं तो मिथ्याशास्त्र पढ़े हैं। उसकी दृष्टि में मिथ्या है न? सच्चे शास्त्र, सच्चे शास्त्र किसको कहना वह तो ... है। जिसमें बंधमार्ग रहित की परिभाषा हो वह सुने, और उसमें ऐसा कहा हो। उसमें कहा हो ऐसा सुने। उसमें कहा हो ऐसा न मानकर अन्यथा माने तो वह सच्चा शास्त्र नहीं पढ़ता है। सच्चा शास्त्र पढ़ता और सुनता भी नहीं है। भले समयसार हो। समझ में आया?

यहाँ तो कहते हैं कि कोई भी आगम का शास्त्र ऐसा होना चाहिये कि वह, जीव की नित्य हयाती रखकर, नित्य हयाती त्रिकाल, त्रिकाल हयाती, सत्ता मौजूद रखकर उसकी दशा में जो विकृत विरूद्ध विकार हो गया है, उसको छोड़ने को शास्त्र कहते

हैं। दूसरा क्या कहना है उसको? जो जिस शास्त्र में ऐसा पढ़कर, सुनकर, विचार करके विकार रहित बताया हो ऐसा उसमें है, ऐसी दृष्टि से वाँचे, सुने तो सच्चा आगम वाँचा, सुना कहने में आये। परन्तु सच्चे आगम में जो कथन है उसको विपरीत दृष्टि से वाँचे तो आगम नहीं पढ़ा है, उसकी दृष्टि को पढ़ा है। उसकी दृष्टि को पढ़ा है। अपनी दृष्टि रखकर पढ़ता है। वह (शास्त्र) क्या कहता है ऐसा दृष्टि में निखालिसता से पढ़ता, सुनता नहीं है।

वह प्रश्न था, भाई! उसका प्रश्न ऐसा था कि सच्चे आगम में भी ऊलटा मतार्थ चलता है न? लेकिन वह सच्चा आगम उसके लिये नहीं है। पढ़ना तो सच्चा आगम है (नहीं)। वह आगम तो सच्चा है, उसकी दृष्टि फेर है तो विपरीत समझता है। वह तो पहले कह दिया कि सच्चे देव-गुरु-धर्म और सच्चा नव तत्त्व, सम्यग्दर्शन-ज्ञान-चारित्र, मिथ्यादर्शन-ज्ञान-चारित्र का स्पष्ट कथन शास्त्रों में है। उसमें जो विपरीत कल्पना करता है उसकी शास्त्र पढ़ने की दृष्टि सच्ची नहीं है। उसकी, सुनने की लायकात भी ठीक नहीं है। महेन्द्रकुमारजी! कहो, समझ में आया? भगवानजीभाई को ऐसा ऊतारना था कि निवृत्त हो तो मुझे ठीक पड़े। दोपहर का थोड़ा सूक्ष्म पड़ता है। समझ में आया? बात सच्ची है, दोपहर का आज तो थोड़ा और सूक्ष्म आयेगा। कहो, समझ में आया?

यहाँ कहते हैं, जो आगम मोक्षमार्ग का... ओहो..हो..! छूटने का मार्ग, उसके साथ बंध--बंधन का मार्ग सो बंध, बंधतत्त्व का वर्णन करे और बंध के मार्ग का वर्णन करे, लेकिन उसका प्रयोजन छूटने के मार्ग का प्रयोजन उसमें है। बंधन और बंधन का कारण आस्रव को समझाये उतना ही प्रयोजन नहीं है। आस्रव सो अहित है, हेय है, बंध सो अहित है, ऐसा समझाने में, संवर सो उपादेय है, निर्जरा सो हित है, मोक्ष है सो परमहित है, ऐसा समझाये उस आगम को आगम कहने में आता है। ऐसा आगम वाँचने, सुनने योग्य है। ऐसा आगम जोड़ना, सीखना, ऐसे आगम सीखना, अन्य शास्त्र को सीखना नहीं ऐसा कहते हैं। दूसरे को सीखाना हो तो ऐसे शास्त्र सीखाना, भाई! दूसरे कहे कि यह पढ़िये, प्रवचन में फलाना पढ़िये, फलाना। सीखना, सीखाना, विचारना, लिखवाना वह, ऐसे शास्त्र हो वह आत्मार्थी को सुनना और विचारना, लिखना और लिखवाना। अन्य के प्रवाह की परंपरा चलने लगे ऐसी भूल ज्ञानी और आत्मार्थी नहीं करते। समझ में आया?

मुमुक्षु :-- हमारे बाप-दादा...

उत्तर :-- बाप-दादा जूठे नहीं है? वह जूठा था तो उसके बाप-दादा जूठे और उसका स्वीकार करने से निगोद में रखड़ता था।

तीन लोक के नाथ तीर्थंकर हुए, वे तीर्थंकर भी पहले स्वयं पूर्व में अनंत तीर्थंकर के समवसरण में गये थे, फिर भी विरुद्ध लेकर आये थे। तीर्थंकर स्वयं, तीर्थंकर नहीं हुए उसके पहले अनंत बार समवसरण में गये, मिथ्यादृष्टिपने वापस आये, उससे क्या हुआ? वस्तु मोक्ष का मार्ग शांति, आनंद, पवित्रता, शुचिता, शौचता, सत्यता, अहिंसकता, स्वाभाविक अहिंसा हाँ! सहज अहिंसकता, वह सब वीतरागी पर्याय है, अरागी दशा है, सम्यग्दर्शन-ज्ञान-चारित्र भी अकषाय दशा है और उस अकषाय दशा का जिसमें स्पष्ट कथन हो, जिसमें गड़बड़ न हो, ऐसे आगम वाँचने और सुनने योग्य है। उसका अर्थ यह है कि इससे अतिरिक्त अन्य सुनने और वाँचने योग्य नहीं है। कोई अर्थ देखना, विचारना करे उसका सवाल नहीं रहता। वह आगम स्वरूप नहीं (वाँचता), यह आगम है इसलिये वाँचन करुँ ऐसा नहीं है। वह तो कुआगम है, परन्तु उसमें क्या कहना चाहते हैं ऐसा जानकर पढ़े।

कारण कि '**संसार में...**' देखो! अब न्याय देते हैं। '**जीव संसार में नाना दुःखों से पीड़ित है।**' एक बात सिद्ध करते हैं। संसार में भगवान आत्मा अनादि से अनेक प्रकार के दुःखों से पीड़ित है। दुःख से पीड़ित है। दुःख नाम आकुलता.. आकुलता.. आकुलता..।

मुमुक्षु :-- नर्क, पशु में...

उत्तर :-- अरे..! आकुलता में। नर्क, तिर्यंच में कहाँ था। अपनी दशा में आकुलता है इसलिये दुःखी है। शरीर दुःख का कारण नहीं है, संयोग दुःख का कारण नहीं है। पैसा सुख का कारण नहीं है, निर्धनता दुःख का कारण नहीं है। निर्धनता वह दुःखरूप नहीं है। सधनता सुख का कारण नहीं है, सधनता वह सुखरूप नहीं है। मात्र आकुलता.. आकुलता.. आकुलता वही कषाय सो दुःखरूप है। समझ में आया? '**यदि शास्त्ररूपी दीपक द्वारा...**' देखो! दुःख से मुक्त होना और सुख की प्राप्ति होनी वही मोक्ष का मार्ग है। आस्रव और बंध भाव भी दुःख है। दुःख संयोग में नहीं है। पुण्य और पाप और विकल्पों का उत्पन्न होना, शुभाशुभ वृत्ति उत्पन्न होनी, व्रत-अव्रत के विकल्प उत्पन्न हो वह भी दुःखदायक है। समझ में आया? व्यवहारव्रत, हाँ! निश्चयव्रत तो स्वरूप की स्थिरता है।

संसार में जो अनेक प्रकार के दुःख से, अनेक प्रकार की छोटी-बड़ी अनेक प्रकार की आकुलता, छोटी या बड़ी, लेकिन आकुलता आकुलता आकुलता है। स्वर्ग में भी आकुलता, नर्क में भी आकुलता, मनुष्य में भी आकुलता, द्वेष में भी आकुलता और राग में भी आकुलता है। क्योंकि जहाँ आत्मा परद्रव्य का आश्रय लेकर सुख लेना चाहता है, वह सब आकुलता है, अशांति है यानी कि दुःख है।

'**यदि शास्त्ररूपी दीपक द्वारा...**' शास्त्ररूपी दीपक द्वारा '**मोक्षमार्ग को प्राप्त कर लें...**' शास्त्ररूपी दीपक द्वारा वह यदि मोक्षमार्ग को प्राप्त कर ले, अर्थात् आत्मा के पवित्र आनन्दरूप पूर्ण दशा वह मोक्ष, उसको प्राप्त करने का अंतरमार्ग--उपाय प्राप्त करे '**तो उस मार्ग में स्वयं गमन कर...**' उस मोक्षमार्ग में अन्दर परिणमन करके। गमन कर नाम अंतर में परिणमन कर '**उन दुःखों से मुक्त हो।**' मोक्षमार्ग में गमन कर। देखो! सम्यग्दर्शन, ज्ञान, चारित्र की निर्मल वीतरागता का परिणमन कर और जो मिथ्यादर्शन, मिथ्याज्ञान और मिथ्याचारित्ररूप आस्रव, बंध और आकुलता है, ऐसी आकुलता के दुःख से मुक्त हों। समझ में आया?

'**सो मोक्षमार्ग एक वीतरागभाव है;...**' वहाँ स्थूलरूप से बात की थी, यहाँ बात स्पष्टरूप से खोल दी। '**सो मोक्षमार्ग एक वीतरागभाव है;...**' मोक्षमार्ग कोई राग नहीं है, पुण्य नहीं है, व्यवहार नहीं है, (वह) मोक्षमार्ग ही नहीं है। मोक्षमार्ग तो एक ही प्रकार का अविकारी परिणाम है। है शेठी? पृष्ठ-१४। '**सो मोक्षमार्ग एक वीतरागभाव है;...**' खलास हो गया। उसमें देखो वीतरागभाव। राग, पुण्य, व्यवहार और निमित्त का लक्ष्य छोड़कर, स्वभाव का आश्रय परमपारिणामिक, चिदानंद स्वरूप, एकरूप शक्ति.. शक्ति.. शक्ति.., उस स्वभाव का शक्तिरूप सत्त्व और तत्त्व के अवलंबन से वीतराग श्रद्धा और राग एवं पुण्य के अभावरूप ज्ञानदशा तथा रमणता हो, ऐसा वीतरागभाव एक ही मोक्षमार्ग है। बीच में राग आये, दया, दान आये, व्रतादि के परिणाम आये वह मोक्षमार्ग नहीं है। देखो! एक वीतरागभाव सो मोक्षमार्ग है। मोक्षमार्ग है सो वीतरागभाव भी है और बीच में रागभाव आये वह भी मोक्षमार्ग है, ऐसा नहीं है।

मुमुक्षु :-- ...

उत्तर :-- राग नहीं। ऊलटा है। राग जितना आता है वह मोक्षमार्ग है ही नहीं। समझ में आया? ओहो..! पहले से लिखा तो धारावाही नव अध्याय तक एकधारा से बात लिखी है। परन्तु लोग समझने के लिये इस शास्त्र के विपरीत अर्थ करे, यह पढ़कर भी अपनी कल्पना उसमें डाले। पढ़े मोक्षमार्ग (प्रकाशक) और डाले (और कुछ)। भाई! व्यवहार तो करना पड़ता है कि नहीं? व्यवहार बिना होता है? व्यवहार के पेट में निश्चय पड़ा है। राग के पेट में मोक्षमार्ग पड़ा है। क्या करें?

मुमुक्षु :--

उत्तर :-- मन की कल्पना। आगम ऐसा नहीं कहता। देखो!

'**मोक्षमार्ग एक वीतरागभाव है;...**' एक वीतरागभाव है पुनः। मोक्षमार्ग तो एक वीतरागभाव (है)। एक वीतरागभाव माने दूसरा रागभाव भी मोक्षमार्ग है ऐसा नहीं।

एक ही वीतरागभाव मोक्षमार्ग अनादि त्रिकाल। महाविदेह क्षेत्र हो, भरत क्षेत्र हो, निगोद क्षेत्र हो, स्वर्ग में हो, नर्क में हो, उसमें आत्मा में सम्यग्दर्शन, ज्ञान, चारित्र निर्विकल्प, विकल्प का आश्रय रहित श्रद्धा, ज्ञान और रमणता यह एक ही मोक्षमार्ग है। दूसरा मोक्षमार्ग तीन काल में जैनागम में वर्णन नहीं किया है। हलका काल है तो क्या हुआ? यह तो, आटा, घी और गुड़ (शक्कर) उसका पकवान बनता है कि नहीं? कि पकवान दूसरी चीज से बनता है? बोलो, पकवान तो ऐसे ही बनता है।

यहाँ हुँडावसर्पिणी (काल) है इसलिये एक और एक चार हो जाते होंगे? हुँडावसर्पिणी काल है इसलिये एक और एक चार करो, एक और एक दो नहीं। यह हुँडावसर्पिणी काल है इसलिये इन्सान के पेट से कूत्ते का जन्म हो। ऐसा है? हुँडावसर्पिणी काल है। हुँडावसर्पिणी काल है तो क्या है? हुँडावसर्पिणी काल है इसलिये आम के वृक्ष पर लिंबु लगाओ। लींबु पका, भाई! हुँडावसर्पिणी काल है न, इसलिये आम के वृक्ष पर लींबु पका। तीन काल में पके नहीं।

मुमुक्षु :-- ...

उत्तर :-- हाँ। समझ में आया? वह तो समझनेवाले, पहिचाननेवाले, प्रयत्न करनेवाले कम होते हैं, तो इससे क्या वस्तु बदल जाती है? वस्तु दूसरी होती नहीं। हुँडावसर्पिणी काल है, भाई! मनुष्य के पेट में--स्त्री के पेट में कूत्ते का जन्म हुआ। हुँडावसर्पिणी काल है। ऐसा बने नहीं तीन काल में। समझ में आया?

ऐसे मोक्षमार्ग में बंधमार्ग पके और बंधमार्ग की डाली पर मोक्षमार्ग पके ऐसा हुँडावसर्पिणी काल में बनता नहीं। समझ में आया? नीम के वृक्ष पर आम पके? आम। ऐसे बंधमार्ग में मोक्षमार्ग पंचम काल में हो, ऐसा तीन काल में बनता नहीं।

मुमुक्षु :-- ...

उत्तर :-- वस्तु में नहीं है।

मुमुक्षु :-- काल का दोष है?

उत्तर :-- नहीं, काल का दोष नहीं है।

चंद्र तो एक ही है, अपनी अँगूली ऐसे रखकर देखता है तो वहाँ दो नहीं हो जाता है। ऐसे शास्त्र में तो यथार्थ बात है, परन्तु अपनी कल्पना करके उसको वाँचते हैं, दूसरा .. हो जाता है। व्यवहार से होता है, बंध से होता है और ऐसा-वैसा होता है, वह तो उसकी दृष्टि का विषय हुआ, वस्तु में ऐसा नहीं है। यह शास्त्र ज्ञेय है। उस ज्ञेय के विषय में ऐसा ज्ञान होता ही नहीं कि बंध और राग से धर्म होता है, ऐसा हो नहीं सकता।

वीतराग, एक वीतराग, एक ही बात। मोक्षमार्ग है। वह बाद में। यहाँ तो एक

मार्ग की परिभाषा नहीं है। एक वीतरागभाव, बस! एक वीतराग दशा। पर का अवलंबन छूटकर, शुद्ध चैतन्यशक्ति का पिंड है, उसमें से वीतराग श्रद्धा, वीतरागी ज्ञान और वीतरागी चारित्र (प्रगट होता है)। राग की श्रद्धा, उससे धर्म, राग के अवलंबन से ज्ञान और राग सो चारित्र, उसका नाश करावे और वीतरागभाव की उत्पत्ति करवाये वही एक मोक्षमार्ग है। कहो, समझ में आया?

इस बात को (समझकर) उसको उसके फलस्वरूप शांति चाहिये कि नहीं? तो उसके प्रारंभ में--शुरूआत में शांति होगी तो फलस्वरूप शांति आयेगी कि नहीं? पहले शून्य रखे हो और फलस्वरूप संख्या आये? पहले शून्य रखे और टोटल में संख्या कहाँ-से आयेगी? ऐसे पहले बंधभाव का सेवन किया और फिर आयेगा मोक्ष का मार्ग, कहाँ-से आयेगा? शास्त्र ऐसा कहता नहीं। शास्त्र, जिसकी संख्या बतानी है उसका अंक बताये। मोक्ष की पर्याय प्रगट करनी है तो उसका लक्षण बताये कि वीतराग श्रद्धा, वीतरागी ज्ञान, वीतरागी चारित्र सो मोक्षमार्ग का लक्षण है। उसे आप समझो, प्रगट करो (ऐसा) शास्त्र का एक ही कथन है। दूसरी बातें आये वह, यह ज्ञान होनेपर जानने का विषय रह जाता है।

'**इसलिये जिन शास्त्रों में किसी प्रकार...**' देखा? '**इसलिये जिन शास्त्रों में किसी प्रकार...**' कोई भी ... '**राग-द्वेष-मोहभावों का निषेध करके...**' लो! पहले का अभाव बताकर, व्यय करके। राग-द्वेष-मोह---मोह माने मिथ्यात्व और राग माने प्रीति, द्वेष माने अरुचि--अणगमा। उसका निषेध करके। '**किसी भी प्रकार राग-द्वेष-मोहभाव का निषेध...**' व्यवहार का निषेध आ गया, भाई! व्यवहार का निषेध आ गया। किसी भी प्रकार शास्त्र व्यवहार का निषेध करे। दोपहर को अधिकार चलता है वह बात है। व्यवहार का निषेध करे और निश्चय का आदर करावे वह शास्त्र, बाकी दूसरे शास्त्र हो नहीं सकते। समझ में आया?

'**राग-द्वेष-मोहभावों का...**' देखो! यह भाव की व्याख्या है, संयोग की बात नहीं है। संयोगों का निषेध करे और संयोगों का आदर करावे यह बात नहीं है। अंतर में जो विकारी राग-द्वेष-मोह (होते हैं उसकी बात है)। राग-द्वेष शब्द में--पर की दया का परिणाम वह राग है, पर को मारना वह द्वेषभाव है, दया में सम्यग्दर्शन मानना वह मोह नाम मिथ्यात्वभाव है। ऐसे भावों का '**निषेध करके...**' ऐसे राग-द्वेष और मिथ्यात्वभाव का अभाव करवाकर '**वीतरागभाव का प्रयोजन प्रगट किया हो...**' जिसमें अकेला वीतरागभाव पर के अवलंबन रहित, चिदानंदावलंबी भाव, ऐसे '**वीतरागभाव का प्रयोजन प्रगट किया हो उन्हीं शास्त्रों का वाँचना-सुनना उचित है।**' समझ में आया? सुमेरुमलजी! ये तो कैसे शास्त्र! भाई! शांति से सुने तो (समझ

में आये), झघड़ा करे तो बापू पार आये ऐसा नहीं है। वादविवाद करे तो पार नहीं आता। वह तो लंबे काल से उस प्रकार की कुयुक्ति सीखा हो तो बात करने में तो पार नहीं आता। वस्तु को समझे तो.. ओहो..! यह तो बहुत फ़र्क़ है। सच्चे शास्त्र के बहाने उसके जूठे अर्थ करके कुशास्त्र का पोषण करता है।

सच्चे शास्त्र का लक्षण अनेकांत है। आज आयेगा, भाई! सच्चा शास्त्र का लक्षण अनेकांत है। अनेकांत अर्थात् राग से वीतरागता नहीं, वीतराग से राग नहीं। जीव से जड़ नहीं और जड़ से जीव नहीं, व्यवहार से निश्चय नहीं और निश्चयमें से व्यवहार उत्पन्न होता नहीं। बस, वही यह अधिकार कहता है।

राग-द्वेष-मोहभावों का अभाव करके और वीतरागभाव का प्रयोजन (प्रगट करके), देखो! अनेकांत हो गया। राग-द्वेष और अतत्त्व श्रद्धा का अभाव और सत् स्वतत्त्व की श्रद्धापूर्वक अन्दर वीतरागता के परिणाम की उत्पत्ति, इसका नाम अनेकांत कहने में आता है। ऐसा अनेकांत शास्त्र का लक्षण है। समझ में आया? (अधिकार) आप का ठीक आया है। भगवानजीभाई!

'**जिन शास्त्रों में किसी प्रकार...**' किसी प्रकार से, ऐसा कहते हैं। कहीं कहा हो कि देखो भाई! ज्ञानी-निमित्त पहले मिलने चाहिये....

(श्रोता :-- प्रमाण वचन गुरुदेव!)

रविवार, दि. ३०-११-१९५२,
तीसरा अधिकार, प्रवचन नं. २

... उसमें अभी अधिकार यह है कि आत्मा में ज्ञान की जो पर्याय है, वह ज्ञानावरणीय और दर्शनावरणीय के कारण, उघाड़ के कारण ज्ञान की पर्याय और दर्शन की पर्याय का क्षयोपशमरूप थोड़ा विकास है, वह इच्छा सहित दुःख का कारण है। तब शिष्य ने प्रश्न किया कि, उस इच्छा में एक-एक विषय को ग्रहण करे तो बहुत इकट्ठा होकर उसे सुख हो कि नहीं? समझ में आया? ऐसा प्रश्न है।

'**जिस प्रकार कण-कण करके अपनी भूख मिटाये उसी प्रकार एक-एक विषय का ग्रहण करके अपनी इच्छा पूर्ण करे तो दोष क्या?**' अल्प ज्ञान